विद्याश्री न्यास : गतिविधि 2015

जयशंकर प्रसाद की सृजनयात्रा पर केन्द्रित तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक-शिविर

साहित्य अकादमी, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, विद्याश्री न्यास एवं हिन्दी विभाग, श्री बलदेव पी.जी. कॉलेज, बड़ागाँव, वाराणसी के संयुक्त आयोजन 'भारतीय लेखक शिविर' एवं 'जयशंकर प्रसाद की सृजन-यात्रा पर केन्द्रित राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन दिनांक 14/01/2015 को 'धर्मसंघ शिक्षा मण्डल' दुर्गाकुंड, वाराणसी के सभागार में हुआ। जयेन्द्रपति त्रिपाठी एवं उमापति दीक्षित के मंगलाचरण तथा आराधना के काव्य-स्तवन से आरम्भ हुए कार्यक्रम में आचार्य विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान प्रो. नंद किशोर आचार्य को, लोककवि सम्मान प्रख्यात भोजपुरी कवि श्री अशोक द्विवेदी को, लोककला सम्मान श्रीमती सुचरिता गुप्ता को तथा श्रीकृष्ण तिवारी गीतकार सम्मान ब्रह्माशंकर पाण्डेय को मुख्य अतिथि श्री किरण शंकर (प्रसाद की के पौत्र), विशिष्ट अतिथि राजेश गौतम (निदेशक, आकाशवाणी, वाराणसी), प्रो. महेश्वर मिश्र (संस्थापक, विद्याश्री न्यास) एवं डॉ. दयानिधि मिश्र (सचिव, विद्याश्री न्यास) द्वारा आ. लेखमणि एवं सुशील की शंखध्वनि के मध्य दिया गया। 'आचार्य विद्यानिवास मिश्र स्मृति-संवाद' में प्रभाकर मिश्र ने पण्डित जी के व्यक्तित्व-कृतित्व के विविध आयामों को याद किया। प्रो. वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी ने पण्डितजी की रचनाओं को अध्ययन एवं अनुभव के पक्षों का सम्मिश्रण कहते हुए उनकी अत्यंत सरल प्रकृति की चर्चा की। बीज वक्तव्य में नंद किशोर आचार्य जी ने सर्वप्रथम पण्डितजी से जुड़ी अपनी यादों का जिक्र करते हुए 1971 में अज्ञेय जी को उनसे मिलाने का माध्यम बताया, जिसके बाद आपसी पत्र-व्यवहार के माध्यम से निरन्तर सम्पर्क बना रहा। उन्होंने कहा कि प्रसाद जी की रचनाओं में, वैदिककालीन, बौद्धकालीन, मुगलकालीन समाज की झलकियाँ मिलती हैं। श्रद्धा और इड़ा मनु के मन की दो मनोवृत्तियाँ हैं, जिसे प्रसाद जी ने 'कामायनी' में बहुत मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में श्रेय और प्रेय का द्वंद्व प्रायः प्रतिबिम्बित होता है। सत्र में रामबख्श मिश्र, सूर्यकान्त व हरिप्रसाद अधिकारी ने भी पण्डित जी से जुड़े संस्मरण साझा किये। सत्र का संयोजन प्रकाश उदय ने किया।

'जयशंकर प्रसाद का समय और साहित्य परिदृश्य' पर केन्द्रित द्वितीय सत्र की अध्यक्षता श्री शंकर लाल पुरोहित ने की। सुशील कुमार पाण्डेय व माधवेन्द्र पाण्डेय ने प्रसाद जी की कृतियों पर विद्वत्तापूर्ण विचार व्यक्त किये। अवधेश प्रधान ने प्रसाद की छलांग को चीते की छलांग बताया व कहा कि बहुत कम भाषाओं में ही ऐसा कवि होगा। देवेन्द्र शुक्लजी ने प्रसाद के साहित्य को प्रातिनिधिक कहते हुए उसे तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक दर्पण कहा। सत्र के विषय-प्रवर्तन एवं संयोजन का दायित्व प्रो. वशिष्ठ अनूप ने निभाया।

श्री अष्टभुजा शुक्ल की अध्यक्षता में 'कवि जयशंकर प्रसाद' पर केन्द्रित तृतीय सत्र में भारती गोरे ने 'छायावाद और प्रसाद साहित्य' के माध्यम से प्रसाद-काव्य में स्त्री-विमर्श पर विशेष बल दिया। प्रो. संतोष भदौरिया ने प्रसाद काव्य में 'कामायनी' और प्रसाद की तीन लम्बी कविताओं (प्रलय की छाया, शेरसिंह का शस्त्र समर्पण व पेशोला की प्रतिध्वनि) पर विस्तृत चर्चा की। उन्होंने कहा कि 'प्रलय की छाया' के माध्यम से प्रसाद ने पुरुषमत की मान्यताओं को प्रश्रय दिया है। श्रीमती कमल कुमार ने 'प्रलय की छाया' को उद्धृत करते हुए इसे कवि का स्त्रियों के प्रति अन्याय बताया। प्रो. अनन्त मिश्र ने कहा कि महापुरुष या महाकवियों के दुनिया में आने का उद्देश्य दुनिया को और बेहतर बनाना होता है। राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय ने कहा कि जब मनुष्य स्वयं को बंधनों से मुक्त कर लेता है तब वह कवि बन जाता है। प्रसाद की रीढ़काव्य-रचना को लेकर इतनी मजबूत है कि आज भी कामायनी श्रेष्ठ रचना है। 'कामायनी' स्त्री सत्ता को महत्त्व देने वाला महाकाव्य है। रानी सरोज गौरिहार ने 'कामायनी' में प्रस्तुत 'प्रतीकात्मक शब्दों का प्रयोग' विषय पर सारगर्भित लेख पढ़ा। अष्टभुजा शुक्ल ने प्रसाद को छायावाद की सीमा से परे भारत का कवि कहा। इन्होंने 'कामायनी' के दो पात्रों श्रद्धा और इड़ा के चरित्र की विस्तृत एवं तुलनात्मक विवेचना की। सत्र का विषय-प्रवर्तन एवं संयोजन श्री जितेन्द्र नाथ मिश्र द्वारा किया गया।

सायंकाल सांस्कृतिक संध्या के आयोजन की शुरुआत माधवी सिंह के 'ले चल वहाँ भुलावा देकर...', 'बीती विभावरी जाग री...' 'जागो जीवन की प्रभात', 'मेरी आँखों की पुतली में तू प्राण बन कर समा जाए...' इत्यादि के गायन से हुई। डॉ. शशिकला तिवारी ने 'हे जनम-जनम के साथी'...' के कुछ अंशों का गायन किया। इस शृंखला में महालक्ष्मी केशरी ने 'तुम कनक किरण के अन्तराल में...', 'अरुण यह मधुमय देश हमारा....' और 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' कविताओं के माध्यम से प्रसाद-काव्य की गेयात्मकता प्रदर्शित की। संगोष्ठी के प्रथम दिन का समापन डॉ. रेवती साकलकर द्वारा प्रसाद की रचनाओं के गायन से हुआ। उन्होंने ''इस करुणा कलित हृदय में...', 'अरुण यह मधुमय देश...', 'बीती विभावरी जाग री...' इत्यादि गीतों से श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया।

'युवा समवाय' के रूप में चतुर्थ सत्र प्रो. सुरेन्द्र प्रताप सिंह की अध्यक्षता में आरम्भ हुआ। अपने उद्बोधन में उन्होंने पण्डित जी के व्यक्तित्व के सन्दर्भ में कुछ कहना मुश्किल बताया। वह कई भाषाओं के ज्ञाता थे। उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि प्रसाद जी जैसा इतना बड़ा कवि अपने ही शहर में कैसे गुम हो गया। इस गोष्ठी के बहाने प्रसाद जी को याद किया जाना हर्ष का विषय है। 'कामायनी' एक 'रोल मॉडल' है। प्रसाद के रचना-संसार का पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए। सत्र के विशिष्ट अतिथि महेन्द्रनाथ दूबे ने कहा कि उन्हें पण्डित जी के साथ रहने का बहुत समय मिला, किन्तु उनसे जुड़ने का यह पहला मौका है। पण्डित जी जैसा दिखते थे वैसे ही थे। उन्होंने हिन्दी के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं सामाजिक इतिहास को भी महत्त्व दिया। पण्डित जी ने साहित्य शिक्षण एवं प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की थी। वशिष्ठ मुनि ओझा ने पण्डितजी को युवा प्रतिभाओं के प्रोत्साहन का पक्षधर कहा।

'जयशंकर प्रसाद : मंच को चुनौती' विषय पर आधारित पंचम सत्र के अध्यक्ष कमलेश दत्त त्रिपाठी ने एक बड़ा सवाल खड़ा किया कि क्या कारण है कि प्रसाद के नाटक रंगमंच के लिए चुनौती बने हुए हैं। अनुशासन को रंगमंचीय आवश्यकता बताते हुए प्रसाद के नाटकों को समाज के लिए और हिन्दी साहित्य की धरोहर बताया और इन पर शोध की संभावनाओं को प्रकट किया। आरती स्मित ने 'ध्रुवस्वामिनी तथा प्रसाद के नाटकों में नारी-जीवन' शीर्षक आलेख के अन्तर्गत प्रसाद जी को नारी-चेतना जागृत करने वाला बताया। आगे उन्होंने कहा कि प्रसाद जी की 'स्त्री' पुरुष के पीछे चलने वाली कठपुतली नहीं है। प्रसाद ने नारी के महिमामय रूप की कल्पना की है। विधु खरे दास ने साहित्य, इतिहास व सृजनात्मकता को केन्द्र में रखकर अपने विचार व्यक्त किए। इन्होंने कहा कि साहित्य अपने अन्दर परिवेश में हो रहे परिवर्तनों को समाहित करता है। प्रसाद जी साहित्य के माध्यम से सम्पूर्ण मानवीय चेतना को स्पष्ट करते हैं। अखिलेश दूबे ने प्रसाद-साहित्य का अध्ययन तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यानगत रखकर करने पर बल दिया। उन्होंने प्रसाद साहित्य को ऊष्मीय व ऊर्जावान तथा उनके नाट्यगीतों के मंचन को चुनौतीपूर्ण बताया, जिसके अभाव में नाट्यरस समाप्त हो जाएगा। अरुण होता ने प्रसाद जी के नाटकों के इतिहास-बोध को प्रासंगिक मानने का आह्वान किया। प्रसादजी जब इतिहास में जाते हैं तो उनके सामने अतीत से ज्यादा वर्तमान का परिदृश्य होता है। 30 के दशक में प्रसाद की पात्र 'विजया' प्रेम खरीद सकती है, क्या वह आज भी प्रासंगिक नहीं है? रेवती रमण जी ने आचार्य मिश्र को शिक्षक मानते हुए उनकी रचनाओं के पठन-पाठन को स्वयं के परिमार्जन का अवसर करार दिया। प्रसाद के नाट्यगीतों को उन्होंने चरित्र के अनुकूल बताया। विशिष्ट वक्ता कुँवर जी अग्रवाल ने बताया कि प्रसाद को पहली चुनौती अपने जीवनकाल में मिली, जिससे वह मर्माहत भी हुए। उनके अनुसार नाटक के लिए रंगमंच हो न कि रंगमंच के लिए नाटक। प्रसाद जी के नाटकों को अस्वीकृति मिलने के मूल में व्यवसायीकरण था। सत्र के विषय-प्रवर्तन एवं संयोजन का उत्तरदायित्व आनन्दवर्धन ने वहन किया।

षष्ठ सत्र 'कथाकार जयशंकर प्रसाद' में सविता उपाध्याय ने 'रचनाकार प्रसाद' के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की प्रासंगिकता पर अपना लेख प्रस्तुत किया, जिसमें नारी-विमर्श को उन्होंने विशेष महत्व दिया। विद्याशंकर शुक्ल ने प्रसाद की रचनाओं को भारतीय संस्कृति, साहित्य व इतिहास का प्रतीक बताते हुए अपने विचार प्रकट किए। डॉ. बलराज पाण्डेय ने प्रसाद की कहानी 'गुण्डा' और एक पुस्तक 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध' पर विशेष चर्चा की। पुस्तक के एक लेख 'छायावाद और यथार्थवाद' पर उन्होंने विशेष बल दिया। रामदेव शुक्ल ने सुन्दरता के मानदण्ड बदलने तथा इसे सांवले और पसीने से लथपथ रूपों में भी देखने का आह्वान किया। सदानन्द शाही ने प्रसाद

की तुलना टैगोर से करते हुए प्रसाद साहित्य को यथार्थवादी कहा। उन्होंने प्रसाद की उपस्थिति को हिन्दी कहानी का विकास कहा। 'स्कन्दगुप्त' को मील का पत्थर बताते हुए उषा किरण खान ने इसकी तरफ विशेष ध्यान की आवश्यकता को रेखांकित किया। डॉ. मुक्ता ने जीवन के प्रति प्रसादजी के आशावादी दृष्टिकोण को प्रकट करते हुए कहा कि जीवन के प्रति निषेधात्मक दृष्टिकोण से वे सहमत नहीं थे। प्रसाद की मान्यता है कि यथार्थवाद का मूल भाव वेदना है। काव्य की अपेक्षा प्रसाद के नाटक अधिक क्रान्तिकारी हैं। उनके नाटक व कहानी हाशिये की स्त्री को विशेष महत्व देते हैं। प्रसादजी पर सामंतवादी ठप्पे का उन्होंने पुरजोर खण्डन किया। इसके समर्थन में 'गुण्डा' व 'पन्ना' जैसे कहानी के पात्रों का उद्धरण दिया। अपने अध्यक्षीय उद्‌गार में प्रो. काशीनाथ सिंह ने प्रसाद के प्रति प्रेमचन्द के उद्धरण का जिक्र किया कि 'प्रसादजी गड़े मुर्दे उखाड़ते हैं', तो यह काम तो गांधी-नेहरू ने भी किया था। गड़े मुर्दे उखाड़ना हमारी आवश्यकता थी। प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' पहली यथार्थवादी कहानी है, किन्तु इसकी चर्चा कभी नहीं होती। प्रसाद के नारी-पात्र स्वाभिमानी हैं। प्रसाद मूल्यों के साथ जीने वाले साहित्यकार हैं। सत्र के विषय-प्रवर्तक व संयोजक बाबू राम त्रिपाठी जी थे।

सप्तम सत्र का विषय 'जयशंकर प्रसाद का कथेतर गद्य' था, जिसमें अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए बलभद्र जी ने साहित्यकार के सम्पूर्ण आकलन को असंभव बताया व कहा कि साहित्यकार का हर दौर में बार-बार अध्ययन करना पड़ता है। मुक्तिबोध ने प्रसाद को दार्शनिक वृत्ति का साहित्यकार कहा है। प्रसाद भी इतिहास को आधुनिकता से जोड़ते हैं। अशोकनाथ त्रिपाठी ने साहित्य को एक संवेदनात्मक सृजन कहते हुए प्रसाद को तुलसी की परम्परा में देखा। प्रसादजी के निबन्धों को अभी साहित्य की दौड़ में ठीक से शामिल भी नहीं किया जा सका है। शिवनारायण जी ने कहा कि यदि हम लघुकथा को विधा की दृष्टि से देखें तो प्रसादजी ने काफी प्रयोग किये हैं। रामू दूबे ने 'ध्रुवस्वामिनी' में प्रसाद की स्त्री-दृष्टि की चर्चा की। अर्जुन तिवारी ने 'पत्रकार प्रसाद' पर अपने विचार प्रकट किये। उन्होंने 'इन्दु' पत्रिका की विशेष चर्चा की। वह पाखण्ड के घोर विरोधी थे। प्रसादजी का पत्रकार के रूप में भी विस्तृत अध्ययन किया जाना चाहिए। अध्यक्षीय वक्तव्य में अच्युतानन्द मिश्र ने कहा कि प्रसादजी ने 'इन्दु' में सर्वाधिक लिखा था। 'हंस' को आगे बढ़ाने में उनकी बड़ी भूमिका थी। उनके लेखों का संकलन करें तो एक बड़ी पुस्तिका बन जाएगी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की परम्परा को प्रसादजी लगातार आगे बढ़ा रहे थे। सम्पूर्ण भारत के अध्ययन में इतिहास, राष्ट्रीयता और सांस्कृतिकता की बातें प्रमुख थीं। प्रसाद जी के साहित्य में तीनों बातें समाहित हो जाती हैं। सत्र का विषय-प्रवर्तन व संयोजन बिजेन्द्र पाण्डेय ने किया।

कार्यक्रम के दूसरे दिन की अन्तिम प्रस्तुति 'कवि-गोष्ठी' थी, जिसमें करुणा सिंह ने ''पैदा नहीं होती माँ की कोख से औरत'' तथा योगेन्द्र नारायण ''वियोगी'' ने 'अंधेरे में रहते हैं, रोशनी की किताब रखते हैं' और अनन्त मिश्र ने ''झुकी हुई औरत गर्दन पर बाल खोलती है'' से श्रोताओं को प्रभावित किया। अलंकार जी ने 'नदी कितनी भी गहरी हो, कोई मुश्किल नहीं होती' तथा गिरधर करूण ने 'क्या पता पत्थर पुनः पत्थर', 'रेत सी इस जिन्दगानी में' और 'बेहया सा मन रहा है' सुनाकर वाहवाही बटोरी। शशि तिवारी ने 'सुबह भी आये और शाम भी आये', 'जिन्दगी मेरी सफल तब होगी जब औरों के लिए काम आए', 'कितनी भी तकलीफ हो मगर मुस्कराये' के गायन से अपने मधुर स्वर का जादू बिखेरा। हरीराम द्विवेदी के 'ऐसी सूरत गढ़ो जिसकी पहचान हो' से श्रोताजन भाव विभोर दिखे। विद्याविंदु सिंह ने 'लहर लहर लहराये रे अँचरवा', संतोष सरस ने 'सभी का मन मिजाज अच्छा हो' व 'जिन्दगानी एक फसाना है तो है', डॉ बृजेन्द्र नारायण सिंह 'शैलेश मितवा' ने 'सबकी ओर निहारो, मितवा कल की ओर निहारो' तथा परमानन्द आनन्द ने 'भीड़ में भी तड़फड़ाता हूँ' का सस्वर पाठ किया। इस क्रम में धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल', डॉ. जगदीश तिवारी 'लोकेश', मनोज तिवारी, रानी सरोज गौरिहार तथा सुनील कुमार साहनी, प्रकाश उदय ने अपने काव्य-पाठ से उपस्थित जन समुदाय को मंत्रमुग्ध किये रखा।

'भारतीय लेखक शिविर एवम् जयशंकर प्रसाद की सृजन यात्रा' पर त्रिदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का 16 जनवरी 2015 को श्री बलदेव पी.जी.कॉलेज, बड़ागाँव, वाराणसी के सभागार में समापन हुआ। समापन समारोह के अध्यक्ष प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित ने जयशंकर प्रसाद के साहित्य कर्म के विविध आयामों की चर्चा करते हुए तुलसी के

बाद प्रसाद को कविमनीषी बताया और प्रसाद के आनन्दवाद को हिन्दी साहित्य ही नहीं विश्व साहित्य की उपलब्धि माना। यांत्रिकता एवं आधुनिकता से भरे इस युग में प्रसाद के साहित्य कर्म में आत्मिक और मानसिक सुख के सूत्र तलाशे जा सकते हैं। प्रसाद ने अपनी रचनाओं में अनेक ऐतिहासिक पात्रों का ऐसा चित्रण किया है कि अध्ययन करते समय वे सारे पात्र हमारे सम्मुख प्रतीत होते हैं। डॉ. प्रभाकर मिश्र ने प्रसाद के साहित्य-कर्म के विभिन्न आयामों का विवेचन करते हुए कहा कि उन्होंने कुछ भी अधूरे मन से नहीं रचा। डॉ. शशि तिवारी ने अपने विचार रखते हुए प्रसाद की कविता 'ले चल मुझे भुलावा देकर...' का सस्वर पाठ किया। डॉ. रामू दूबे ने प्रसाद के साहित्य को भारतीय मनीषा के रूप में रेखांकित किया। संगोष्ठी के विशिष्ट अतिथि बालमुकुन्द ने प्राचीन ज्ञान की आवश्यकता पर बल देते हुए भारतीय परम्परा की पहचान को जरूरी बताया। उनके अनुसार प्रसाद का साहित्य हमारी आत्मीय भावना को विकसित करता है। राष्ट्रवादी विचारधाराओं को समझने और सीखने के लिए वर्तमान में प्रसाद के साहित्य पर और अधिक अनुसंधान और अध्ययन होना चाहिए। उन्होंने भारतीयता की भावना को विकसित करने के लिए 'हिमाद्रि तुंग-शृंग' का उदाहरण प्रस्तुत किया, साथ ही इस पर भी बल दिया कि साहित्यिक इतिहास को संकल्पित करते समय हमें अपनी प्राच्य संस्कृति को अपने मस्तिष्क में रखना होगा तभी हम रचनात्मक साहित्य का विकास कर सकते हैं। डॉ. रेवती रमण ने कहा कि जब तमाम देशों की संस्कृति मिटती जा रही है तब भारतीय संस्कृति का बचा रहना यह बताता है कि इसने हमारे हृदय में स्थान बना लिया है। प्रसाद का साहित्य इसी का प्रमाण और परिणाम है। श्रीमती रानी सरोज गौरिहार ने नारी-विमर्श के सार्थक सूत्रों की प्राप्ति के लिए प्रसाद साहित्य के अध्ययन पर जोर दिया। प्रो. अनन्त मिश्र ने प्रसाद के साहित्य कर्म के बहाने साहित्य की मूल संकल्पना के रूप में मनुष्य की पक्षधरता को स्थापित किया। प्रसाद का साहित्य हमें देव या दानव नहीं, बल्कि मनुष्य बनने को प्रेरित करता है। आयोजन का प्रारंभ प्रसाद की कविता के गायन से हुआ। प्राचार्य डॉ. उदयन मिश्र ने अतिथियों का स्वागत किया। डॉ. दयानिधि मिश्र, सचिव, विद्याश्री न्यास ने अपने स्वागत भाषण में राष्ट्रीय संगोष्ठी उपलब्धियों का चर्चा की। विषय प्रवर्तन और संयोजन डॉ. रामसुधार सिंह ने तथा धन्यवाद प्रकाश डॉ. छोटेलाल ने किया। आयोजन में डॉ. रवीन्द्रनाथ दीक्षित, डॉ. विश्वनाथ कुमार, डॉ. सविता श्रीवास्तव, डॉ. पूनम, डॉ. कंचन, अरविन्द्र चौधरी, ध्रुवनारायण पाण्डेय, विनीत श्रीवास्तव, सत्येन्द्र मिश्र, धीरज मिश्र, राजेश कनौजिया के अतिरिक्त स्थानीय विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों के छात्रों की बड़ी संख्या में उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

पं. विद्यानिवास मिश्र की पुण्य-तिथि पर संस्कृत कवि-गोष्ठी सम्पन्न

विद्याश्री न्यास के सांवत्सर कार्यक्रमों में से एक संस्कृत कवि-गोष्ठी पण्डित विद्यानिवास मिश्र की पुण्यतिथि पर दिनांक 14 फरवरी 2.15 को बौद्ध दर्शन विभाग, संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में योग-साधना केंद्र में प्रो. यदुनाथ प्रसाद दूबे कुलपति, संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। मुख्य अतिथि के रूप में प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी और विशिष्ट अतिथि के रूप में प्रो. शिवजी उपाध्याय की उपस्थिति से यह गोष्ठी विशेषतः गौरवान्वित हुई। आयोजन का शुभारंभ आचार्य लेखमणि के मंगलाचरण और साहित्य अकादमी से सद्यः पुरस्कृत प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी को विद्याश्री न्यास की तरफ से न्यास के सचिव डॉ. दयानिधि मिश्र द्वारा अंगवस्त्र एवं प्रतीक चिह्न प्रदान कर सारस्वत सम्मान से हुआ। स्वागत प्रो. रमेश कुमार द्विवेदी एवं संचालन प्रो. हरिप्रसाद अधिकारी ने किया।

मुख्य अतिथि प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी ने जापान के 'हाइकू' छन्द में निबद्ध कविता 'विश्वभारती' एवं वर्तमान समाज की विसंगतियों को लक्ष्य कर 'हास्यपद्यानि' रचना का पाठ किया, वहीं श्रीमती कमला पाण्डेय ने 'विद्यानिवासायते' कविता के माध्यम से अपने उद्‌गार व्यक्त किए। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय ने प्रजापतिसूक्त, अक्षयसूक्त, गृहमहिमा तथा अत्रसूक्त आदि वैदिक सूत्रों की प्रस्तुति लौकिक संस्कृत में की। डॉ. पवन कुमार शास्त्री ने भावनाओं को कचोटने वाली काव्य रचना ''सर्वे आत्मनस्वार्थं चिन्तयन्ति, सर्वे स्वं स्वं कोश पूरयन्ति'' का पाठ किया, जिसका शीर्षक 'इदं भारतं मम प्रियदेशः' था। इसके माध्यम से उन्होंने स्वार्थ व देशभक्ति की भावनाओं को रेखांकित किया। प्रो. उमारानी त्रिपाठी की कविता ''अयि राष्ट्रदेवते! ते नीराजने विधेया' ने भूरि-भूरि प्रशंसा अर्जित

की, जो भारतभूमि के सौन्दर्य, महिमा एवं अधिष्ठातृदेवता को समर्पित रही। इस क्रम में श्री लेखनाथ पौड्वाल ने 'आचार्यविद्यानिवासमिश्रस्मरणम्', केशव काश्यप ने 'चल चल पुरतो', 'रविकान्त भारद्वाज ने 'श्रीगुर्वाष्टकम्', अखिलेश कुमार मिश्र ने 'मधुर संस्कृतम्', 'प्राङ्केश कुमार मिश्र ने 'भारतं स्यात् पुनः संस्कृतं भारतम्', 'केशव पोखरेल ने 'संस्कृते राजते भारतं सुन्दरम्' एवं शिवप्रताप पाण्डेय ने कविताओं का सस्वर पाठ कर उपस्थित जनसमूह को भाव-विभोर कर दिया। प्रो. कौशलेन्द्र पाण्डेय ने 'वृत्तचर्पटम्' कविता के माध्यम से उपस्थित जनसमूह के समक्ष वर्तमान राजनैतिक दशा का व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया। आगे अपनी तीन कविताओं 'नहि कश्चित शृणोति माम्', 'भविष्यवक्ता भवितुकामोऽहम' एवं 'अतिथिरस्मि' को समसामयिकी से संबद्ध कर वाहवाही अर्जित की। पूर्व प्रशासनिक अधिकारी श्री गायत्री प्रसाद पाण्डेय ने कन्या भ्रूण हत्या पर संवेदनीशील कविता सुनाई।

संचालक प्रो. हरिप्रसाद अधिकारी ने 'विद्यानिवासोगुरूः' कविता में मिश्र जी के व्यक्तित्व-कृतित्व को रेखांकित किया। विशिष्ट अतिथि प्रो. शिवजी उपाध्याय ने युवा कवियों के वाचन पर प्रसन्न होते हुए प्रोत्साहन अभियान की घोषणा की जिसमें न्यास के सचिव डॉ. दयानिधि मिश्र ने भी सहायता का वचन दिया। प्रो. अधिकारी के अनुरोध पर प्रतिबद्धता के कारण अब से गोष्ठी का आयोजन स्थल यहीं होगा।

अध्यक्षीय उद्बोधन में प्रो. यदुनाथ प्रसाद दूबे ने प्रो. विद्यानिवास मिश्र से हुई प्रथम मुलाकात से ही उनकी सहजता व स्नेहिल भाव से साक्षात्कार का वर्णन किया व अनेक मर्मस्पर्शी प्रसंग साझा किये। इसके अतिरिक्त उन्होंने टैगोर जी के शान्तिनिकेतन की स्थापना पर रचित श्लोक प्रस्तुत किये।

कवि-गोष्ठी में डॉ. ध्रुवनारायण पाण्डेय, सत्येन्द्र मिश्र, विकास वर्मा, विनीत श्रीवास्तव, सुरेन्द्र प्रजापति आदि उपस्थित रहे।

गोष्ठी के अध्यक्ष एवं विशिष्ट अतिथि को सम्मानित करने के साथ ही इस सांवत्सर कार्यक्रम को प्रतिवर्ष बौद्ध दर्शन विभाग के संयुक्त तत्वावधान में करने का निर्णय लिया गया।

धन्यवाद ज्ञापन विद्याश्री न्यास के सचिव डॉ. दयानिधि मिश्र ने किया।

पण्डित मधुसूदन ओझा स्मृति–संवाद एवं 'वेद–विज्ञान' पर राष्ट्रीय परिसंवाद

संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, विद्याश्री न्यास, श्री शंकर शिक्षायतन एवं संस्कृत विभाग, श्री बलदेव पी.जी. कॉलेज, बड़ागाँव के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 18.12.2015 को संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सभागार में 'पं. मधुसूदन ओझा के रचना–कर्म के संदर्भ में वेद–विज्ञान' विषयक राष्ट्रीय परिसंवाद में बीज वक्तव्य प्रस्तुत करते हुए श्री प्रभुनाथ द्विवेदी ने बताया कि ज्ञान जब स्वानुभूत होता है तो विज्ञान कहा जाता है। उन्होंने ओझा जी के वेद विज्ञान विमर्श को आध्यात्मिक विज्ञान की संज्ञा दी और कहा कि इस विज्ञान के आश्रय से उन्होंने ब्रह्म विद्या और यज्ञ विद्या के रहस्य का उन्मीलन किया। श्री हरिप्रसाद अधिकारी ने पराधीनता के दिनों में भी अपने वैदुष्य से विश्व को आलोकित करने वाले ओझा जी के रचना–कर्म पर निरन्तर शोध की आवश्यकता बताई। श्री किशोर मिश्र ने बताया कि ओझा जी के वेद–विज्ञान के अनुशीलन से सृष्टि प्रक्रिया में विविध तत्त्वों के प्रादुर्भाव तथा लोकजीवन में उनकी उपादेयता को समझा जा सकता है। श्री कृष्णकान्त शर्मा ने ओझा जी की कृति 'वर्ण समीक्षा' के आधार पर भाषिक संरचना के विविध स्तरों की वैज्ञानिकता को रेखांकित किया। श्री हृदय रंजन शर्मा ने ओझा जी द्वारा वेद–मंत्र के शब्दों का विवेचन करते हुए, श्रुति–स्मृति आदि से प्राप्त विवरणों से उसके अर्थ को पुष्ट करते हुए सृष्टि और जीवन के दिव्य स्वरूप को प्रकाशित करने वाली पद्धति अपनाने की प्रशंसा की। श्री जी. आंजनेय शास्त्री ने ओझा जी के विज्ञान–भाष्य को सार्वदेशिक और सार्वकालिक महत्त्व को बताया। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री एच.के. महापात्रा ने वेद–विज्ञान के संदर्भ में ओझा जी के विशिष्ट योगदान को स्पष्ट करते हुए कहा कि वेद विज्ञान के गंभीर और आभ्यन्तर अर्थ के परिज्ञान के बिना भारतीय संस्कृति को उनके सही संदर्भों में नहीं समझा जा सकता।

इस परिसंवाद का शुभारंभ श्री अमनमणि त्रिपाठी, श्री राहुल त्रिपाठी एवं श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी तिवारी द्वारा प्रस्तुत मंगलाचरण से हुआ। अतिथियों–मनीषियों का स्वागत विद्याश्री न्यास के सचिव डॉ. दयानिधि मिश्र ने तथा धन्यवाद–ज्ञापन श्री धनंजय कुमार पाण्डेय ने किया। संयोजन और संचालन श्री शंकर कुमार मिश्र ने किया।

पण्डित विद्या निवास मिश्र स्मृति–व्याख्यान एवं 'भाषा एवं संस्कृति' पर राष्ट्रीय परिसंवाद

हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, श्री शंकर शिक्षायतन एवं विद्याश्री न्यास के संयुक्त तत्वावधान में, महात्मा गांधी काशीविद्यापीठ के पुस्तकालय भवन के सभागार में पं. विद्यानिवास स्मृति व्याख्यान एवं भाषा एवं संस्कृति पर राष्ट्रीय परिसंवाद दो सत्रों में सम्पन्न हुआ जिसके मुख्य वक्ता प्रो. कमलेश दत्त त्रिपाठी थे तथा प्रथम सत्र की अध्यक्षता डॉ. बदरी नाथ कपूर ने तथा द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डॉ. भगीरथी प्रसाद त्रिपाठी ''वागीश शास्त्री'' ने की और प्रो. अवधेश प्रधान व प्रो. मारुति नन्दन तिवारी ने वक्तव्य दिया।

प्रो. कमलेश दत्त त्रिपाठी ने दो सत्रों के अपने व्याख्यान में बताया कि हमारे समय की विडम्बना है कि हम स्वयं अपनी भाषा को भूल रहे हैं एवं तिरस्कृत कर रहे हैं। आयातित एवं उधार ली गयी भाषा तथा परिभाषाओं में हमारा चिन्तन बंध गया है जो हमारा वास्तविक चिन्तन नहीं है। उन्होंने आगे बताया कि भाषा समस्त विश्व में संप्रेषण के माध्यम के रूप में स्वीकार की गयी किन्तु हमारे चिन्तन में उसे चेतना से अभिन्न माना गया है। अतः भाषा को इस प्रकार के प्रतिरोध का माध्यम बनाना होगा जिससे कि भाषा की व्यापकता एवं हमारी निजता सुरक्षित रहे। संस्कृति के सम्बन्ध में उन्होंने आख्यान, परम्परा, मिथक तथा रूपक की सांस्कृतिक जीवन में व्याप्ति की विशद व्याख्या की।

प्रो. अवधेश प्रधान ने बताया कि हमारी संस्कृति में भाषा के गहरे रहस्य की दार्शनिक व्याख्या की गयी है। भारतीय संस्कृति में भाषा, मनोविज्ञान, सृष्टिविज्ञान में महान चिन्तन किया गया है जिसे सुरक्षित रखने की महती आवश्यकता है।

प्रो. मारुति नन्दन तिवारी ने बताया कि भाषा और संस्कृति अद्वैत भाव को दर्शाती हैं। भारतीय संस्कृति अविभक्त है तथा भाषा चिन्तन तक सीमित है जिसे आचार व्यवहार में परिवर्तित करने की आवश्यकता है अन्यथा हिंसा अशांति, परिग्रह की त्रासदी से मुक्त नहीं हो सकते हैं।

डॉ. बदरीनाथ कपूर ने शब्द कोष के आधार पर विस्तृत व्याख्या की तथा भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी ''वागीश शास्त्री'' ने भाषा को भाषण से तथा संस्कारों को संस्कृति से जोड़ा और बताया कि सांस्कृतिक आदान–प्रदान से भाषा का प्रवाह परिवर्तित होता रहता है।

इस परिसंवाद का शुभारंभ डॉ. जयेन्द्रपति त्रिपाठी एवं डॉ. उमापति दीक्षित के मंगलाचरण से हुआ। अतिथियों, मनीषीयों का स्वागत डॉ. शिव कुमार मिश्र अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, म.गां. काशीविद्यापीठ ने किया तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. दयानिधि मिश्र, सचिव, 'विद्याश्री–न्यास' ने किया व संचालन डॉ. श्रद्धानन्द ने किया।

परिचर्चा में डॉ. सुरेन्द्र प्रताप सिंह, डॉ. अरविन्द पाण्डेय, डॉ. चतुर्भुज तिवारी, डॉ. श्रीनिवास ओझाा, प्रो. लक्ष्मीशंकर उपाध्याय, प्रो. अशोक सिंह, डॉ. मुक्ता, डॉ. जितेन्द्र नाथ मिश्र, पवन कुमार शास्त्री, डॉ. निरंजन सहाय आदि सहित भारी संख्या में अध्यापक, छात्र एवं छात्राओं की उपस्थिति रही।